UGC Approved Journal
Research Link
Since March 2002
An International, Registered & Referred Monthly Journal : Political Science
Research Link - 163, Vol - XVI (8), October - 2017, Page No. 87-89
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

भारतीय लोकतांत्रिक निर्वाचन व्यवस्था में सोशल मीडिया की भूमिका

प्रस्तुत शोधपत्र में भारतीय लोकतांत्रिक निर्वाचन व्यवस्था में सोशल मीडिया की भूमिका का अध्ययन किया गया है। आज सोशल मीडिया द्वारा भारतीय लोकतंत्र व निर्वाचन प्रक्रिया को नवीनता प्रदान की जा रही है और यह जन-मन की आवाज के रुप में उभर रहा है। वस्तुतः सोशन मीडिया अपार संभावनाओं, व्यापक उपयोकगिताओं व अत्यधिक मूल्यों एवं आदर्शों के निर्माण, विकास व सुदृढ़ीकरण में इसकी पारदर्शी व निष्पक्ष भूमिका परम आवश्यक है, क्योंकि मीडिया ही वस्तुस्थिति का वास्तविक प्रतिबिम्ब या दर्पण होता है।

डॉ.संजीव सी.शिरपूरकर

आज भूमंडलीकरण के इस दौर में 'डिजिटल क्रांति के फलस्वरुप जिस द्रुत गति से समूची व्यवस्था में बदलाव या परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहा है, वैसा बदलाव इतिहास में इससे पहले कभी नजर नही आया था। संचार क्रांति के कारण भारत सहित विश्व के तमाम विकासशील राष्ट्रों की सरकारों व जनता के नजरिये में व्यापक स्तर पर बदलाव या परिवर्तन का बीज बोया गया है। यह बीज सोशल मीडिया के माध्यम से अंकुरित, पल्लवित व पुष्पित होकर न सिर्फ जनमानस की सोच को विकसित व परिपक्व बनाने हेतु प्रयासरत है, वरन् शासन व प्रशासन के प्रत्येक स्तर पर पारदर्शिता लाकर लोकतंत्र की जड़ों को सिंचित व सुदृढ़ करने का प्रयास भी निरंतर जारी है। आज सूदूरवर्ती ग्रामीण अंचलों से लेकर सभ्य शहरी इलाकों तक अधिकांश नागरिक संचार क्रांति से प्रभावित होकर ऑनलाईन दिखाई दे रहे हैं।

आज पुराने लैण्डलाईन कनेक्शन के स्थान पर आधुनिक स्मार्टफोन, पुरानी डाक व तार सेवाओं के स्थान पर एस.एम.एस. व कागजी आदेशों का स्थान ई.मेल ने ले लिया है, जिसके फलस्वरुप कार्यालयीन कार्यवाही में होने वाली लेट लतीफी को नियंत्रित करने में बडी सफलता हासिल हुई है। विविध सोशल वेबसाईट्स के कारण आज आम जनता न सिर्फ पहले से ज्यादा व्यस्त हो गई है, वरन् कुशल व दक्ष भी बनती जा रही है, अर्थात् हम यह कह सकते हैं कि डिजीटलाईज्ड निर्भरता के इस युग में सूचना तकनीक ने व्यक्तियों के जीवन को पूर्णतः बदलकर रख दिया है।

''वस्तुतः सोशल मीडिया इंटरनेट पर आधारित अनुप्रयोगों का एक ऐसा समूह है, जो प्रयोक्ताजनित सामग्री के सृजन और आदान प्रदान की अनुमति देता है। इसके अतिरिक्त सोशल मीडिया मोबाईल और वेब आधारित प्रौद्योगिकी से ऐसे क्रियाशील मंचों का निर्माण करता है, जिसके माध्यम से व्यक्ति और समुदाय प्रयोक्ताजनित सामग्री का संप्रेषण एवं सह सृजन कर सकते हैं, उसका विरोध कर सकते हैं। यह व्यक्ति संगठन एवं समुदाय के बीच संचार में महत्वपूर्ण और व्यापक परिवर्तन को अंजाम देता है। सोशल मीडिया से संबंधित विभिन्न नेटवर्किंग वेबसाईट्स जैसे वाट्स ऐप, फेसबुक, ट्विटर, ब्लॉग, आदि के माध्यम से विचारों एवं सूचनाओं के आदान प्रदान तथा जनमत निर्माण कर डिजीटल डेमोक्रेसी के सपनों को साकार करने का प्रयास जारी हैं''।[1]

आज यह कहा जा सकता है कि सोशल मीडिया जन जागृति या जनचेतना का एक ऐसा प्लेटफॉर्म बन गया है, जो इंटरनेट द्वारा संचालित है तथा जिसके माध्यम से हम कोई भी सूचना या समाचार अत्यंत तीव्र गति से प्रेषित कर सकते हैं। इस संबंध में विस्तृत दृष्टिकोण इस ओर इशारा करता है कि ऐसा प्रत्येक माध्यम जो समाज में सूचनायें प्रसारित व प्रचारित करता है, सोशल मीडिया के अंतर्गत आता है। इसे जागरुकता व चेतना उत्पन्न करने हेतु वरदान के रुप में देखा जा सकता है। ''आज इंटरनेट शहरों से लेकर सूदूर ग्रामीण अंचलों तक अपने पाँव पसार चुका है, फलस्वरुप गाँव बदल रहे हैं, ग्रामीण परिवेश सभ्यता व संस्कृति भी उसी अनुपात मे परिवर्तित हो रही है। नित नवीन जानकारियाँ शहरों से ग्रामों तक निरंतर प्राप्त हो रही है, अर्थात् आज यह कहना समीचीन होगा कि सोशल मीडिया और जनजागरण एक ही सिक्के के दो पहलू नजर आ रहे हैं''।[2]

आज का सोशल मीडिया बुध्दिजीवियों के सक्रिय अंर्तमन की उपज माना जा सकता है। यह हमारे जीवन का अभिन्न अंग बन गया है। आज ''राऊटर'' व ''सर्वर'' के माध्यम से हम संपूर्ण विश्व की समस्त विश्वसनीय सूचनायें हासिल करने में सक्षम बन गये है। आज यह पारदर्शिता तथा विविध समस्याओं के चित्रण व

विभागाध्यक्ष (राजनीति विज्ञान विभाग), सेठ केसरीमल पोरवाल महाविद्यालय, कामठी, जिला नागपुर (महाराष्ट्र)

उनके समाधान का भी प्रभावी माध्यम प्रतीत हो रहा है, अर्थात् आज जिस प्रकार इंटरनेट को सूचना प्रौद्योगिकी की जीवन रेखा कहा जाता है, ठीक उसी तरह सोशल मीडिया को भी जनजागरण की जीवन रेखा कहना पूर्णतः प्रासंगिक ही होगा।

भारत में सोशल मीडिया की संकल्पना के उदय एवं विकास के संबंध में यदि हम यह कहें कि आज से पाँच वर्ष पूर्व का सोशल मीडिया तथा आज के सोशल मीडिया में जमीन आसमान का अंतर परिलक्षित हो रहा है, तो इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं होनी चाहिए। अमेरिका मे तो 2004 में ही फेसबुक, ट्विटर जैसे सोशल मीडिया के साधन प्रभावक भूमिका का निर्वहन कर रहे थे, जबकि भारतीय सोशल मीडिया उस समय इन सब साधनों से बहुत ज्यादा वाकिफ नहीं था।

भारत जैसे विशाल प्रजातांत्रिक राष्ट्र में प्रति पाँच वर्ष पश्चात् संपन्न होने वाले निर्वाचनों के फलस्वरुप ही वास्तविक अर्थो में जनता का शासन प्रस्थापित होता है। इस जनतंत्र की प्रगल्भता, सुदृढ़ीकरण एवं स्थायित्व हेतु ही संविधान निर्माताओं ने भारत में एक पृथक व स्वतंत्र निर्वाचन आयोग का गठन किया था। भारत में संपन्न होनेवाले निर्वाचन न सिर्फ इस देश की शासन व्यवस्था को प्रभावित करते हैं, वरन् इसका प्रत्यक्ष व परोक्ष प्रभाव संपूर्ण उप महाद्वीप में भी परिलक्षित होता है। विदेशी प्रेक्षकों की सूक्ष्म दृष्टि भी भारतीय चुनाव प्रक्रिया व परिणामों पर अवश्य रहती है।

भारत में संपन्न विगत लोकसभा चुनाव ''डिजीटल दुनिया में छाया रहा। फेसबुक, ट्विटर, वाट्स ऐप जैसे सोशल वेब साईट्स का जमकर इस्तेमाल हुआ। साथ ही मोबाईल नेटवर्किंग का भी भरपूर विस्तार हुआ। एक अध्ययन के अनुसार भारत में 2014 के लोकसभा चुनावों में लगभग 150 सीटों पर सोशल मीडिया ने जीत में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया था। साथ ही दिल्ली में आम आदमी पार्टी द्वारा अपना लगभग 80 प्रतिशत चुनाव प्रचार सोशल मीडिया के माध्यम से करके ही ऐतेहासिक सफलता हासिल की थी। व्यक्तिगत ब्रांडिंग के लिए सोशल मीडिया का इस्तेमाल बड़े–बड़े नेताओं, खिलाडियों, अभिनेताओं द्वारा धडल्ले से किया जा रहा है। कई बड़े नेताओं तथा हस्तियों द्वारा सोशल मीडिया के उपयुक्त इस्तेमाल हेतु बड़े–बड़े तकनीकी विशेषज्ञों की ट्विटर प्रबंधन और मेलिंग के लिए सहायता ली जाती है। प्रधानमंत्री व मुख्यमंत्रियों द्वारा सोशल मीडिया की सहायता से सुर्खियाँ बटोरने में कोई कसर नहीं छोड़ी गई है एवं अभी भी अपने लक्ष्यों को हासिल करने हेतु सोशल मीडिया का वेबखूबी इस्तेमाल कर रहे हैं।

''न्यूयार्क टाईम्स ने'' सोशल मीडिया इन इंडियन पॉलिटिक्स'' में लिखा है कि, ''सोशल मीडिया भारतीय प्रजातंत्र में एक नवीन महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रहा है..... इस देश में 790 मिलियन भारतीय मतदाताओं में लगभग 160 मिलियन मतदाता ऐसे हैं, जो 18 से 24 वर्ष की उम्र के हैं एवं जिन्हें पहली बार मतदान का अधिकार हासिल हुआ है। सोशल मीडिया नवीन आम आदमी को विभिन्न राजनीतिक दलों व उम्मीदवारों से जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रहा है।''[3] इसी तरह भाजपा के आई.टी.सेल के सोशल मीडिया प्रभारी मि.अरविंद गुप्ता कहते हैं कि, ''हमने यह पाया कि इस देश के अधिकांश युवाओं का रुझान सोशल मीडिया के प्रति बहुत ज्यादा है, अतः हमने यह प्रयास किया कि, जब वे इंटरनेट का इस्तेमाल करे तब हम उन साईट्स पर उपस्थित रहे''।

''दिसंबर 2016 की स्थिति में हमारे देश में लगभग 115.28 करोड़ टेलीकाम उपभोक्ता विद्यमान थे, जिनमें से शहरी क्षेत्रों में 68.31 करोड़ तथा ग्रामीण क्षेत्रों में 46.86 करोड उपभोक्ता थे''।[4] यही कारण है कि हमारे देश में सोशल मीडिया पर सक्रिय रहने वाले यूजर्स की संख्या दिन–प्रतिदिन बढ़ रही है। सस्ते दामों पर इंटरनेटयुक्त स्मार्टफोन की उपलब्धता व न्यूनतम दरों पर ब्राड बैंड सुविधा के कारण यह वृध्दि संभव हो सकी है। मतदाताओं के इस विशाल समूह की महत्वपूर्ण भूमिका के मद्देनजर अधिकांश राजनीतिक दलों द्वारा एक पृथक मीडिया सेल का गठन किया गया है, ताकि आसानी से जनमानस को अपनी नीतियों, उद्देश्यों एवं कार्यक्रमों से परिचित कराकर उन्हे अपनी ओर आकर्षित किया जा सके।

आज सोशल मीडिया के माध्यम से न सिर्फ चुनाव प्रचार संभव है, वरन् विभिन्न प्रासंगिक मुद्दों पर चर्चा, चर्या, चिंतन, वाद–विवाद एवं अंततः सुसंवाद स्थापित कर आम जनता को सुशिक्षित कर प्रजातंत्र को सुदृढ व प्रभावी बनाया जा सकता है। आज सोशल मीडिया जननेताओं की छवि सुधारने, विविध समस्याओं व मुद्दों को पारदर्शी ढंग से प्रस्तुत करने, जनसामान्य को सजग व सचेत करने, मतदाता को मतदान हेतु प्रेरित करने तथा निर्वाचन प्रक्रिया के विभिन्न स्तरों पर उन्हें सक्रिय सहभाग हेतु प्रोत्साहित करने में सोशल मीडिया की अहम भूमिका का ही परिणाम है कि आज हमें मतदान के प्रतिशत में बढ़ोतरी दिखलाई दे रही है।

''विभिन्न चुनावों में उम्मीदवारों के संपूर्ण जीवन वृत्त को जनता के समक्ष प्रस्तुत करना, अलग अलग निर्वाचन क्षेत्रों के विभिन्न राजनीतिक दलों के उम्मीदवारो द्वारा मतदाताओं के सवाल व जवाबों का सीधा प्रसारण, कर उनके बीच सीधे संपर्क स्थापित करने, जनसमस्याओं को त्वरित उजागर कर उनके निवारण हेतु योग्य सुझाव देने तथा नीति निर्माण व निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित करने में परंपरागत प्रसार माध्यमों की तुलना में सोशल मीडिया क्रांतिकारी भूमिका का निर्वहन कर रहा है''।[5]

भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में प्रति वर्ष किसी न किसी राज्य में कोई न कोई चुनाव अवश्य संपन्न होता है। चुनावों के दौरान बैनर, पोस्टर, विशाल आमसभा, अखबारों मे बड़े–बड़े विज्ञापन, बड़े–बड़े होर्डिंग्स, कट आऊटस व सोशल मीडिया के माध्यम से विभिन्न राजनीतिक दलो के उम्मीदवार मतदाताओं के बीच अपनी पैठ जमाने के प्रयास में लगे रहते है, किंतु आज यह अनुभव किया जा रहा है कि इस संपूर्ण प्रचार प्रक्रिया में से सोशल मीडिया के माध्यम से मतदाता ज्यादा प्रभावित हो रहे हैं, अर्थात् हम यह कह सकते हैं कि यदि विभिन्न उम्मीदवार चाहे तो चुनावी सभा व विज्ञापनों पर होनेवाले भारी भरकम खर्चो में कटौती कर सोशल मीडिया के माध्यम से चुनाव प्रचार पर ज्यादा जोर देकर भी मतदाताओं तक आसानी से पहुँच सकते हैं एवं समय तथा धन के अपव्यय को नियंत्रित कर सकते हैं।

यहाँ यह ध्यान में रखना बेहद जरुरी है कि भारतीय निर्वाचन आयोग ने विगत लोकसभा चुनावों के दौरान सोशल नेटवर्किंग साईटस् के व्यापक इस्तेमाल के मद्देनजर 19 मार्च 2014 को विस्तृत दिशा–निर्देश जारी किए थे, जिसके अंतर्गत चुनाव प्रचार से संबंधित कोई भी जानकारी सोशल मीडिया पर अपलोड करने के पूर्व आयोग से पूर्ण प्रमाणन हासिल करना अनिवार्य कर दिया गया था। साथ ही नामांकन पत्र दाखिल करते समय प्रत्येक उम्मीदवार हेतु फार्म नं. 26 शपथ पत्र के रुप में देना अनिवार्य घोषित कर दिया गया था, जिसमें उम्मीदवार को अपना टेलीफोन नंबर, ई–मेल आई.डी. तथा सोशल मीडिया अकाउन्टस् की जानकारी देना अनिवार्य कर दिया गया था। आयोग ने सोशल नेटवर्किंग साईटस् को भी यह स्पष्ट निर्देश दिए थे कि वह राजनीतिक दलों व उम्मीदवारों द्वारा विज्ञापनों पर किए जाने वाले खर्च का लेखा–जोखा रखें, ताकि वह उसे माँगे जाने पर चुनाव आयोग के समक्ष प्रस्तुत कर सके।

बहरहाल इतना तो तय है कि युवा मतदाताओं की बहुतायत वाले इस देश में सोशल मीडिया के माध्यम से युवाओं के मनोविज्ञान को समझने व उसे प्रभावित करने का एक सिलसिला प्रारंभ हो चुका है। अब तंत्रज्ञान में निपुण ''युवा वोट बैंक'' सभी राजनीतिक दलों हेतु अहम बनता जा रहा है। वह दिन दूर नही जब मतदाताओं का यह वर्ग ''ई–वोटिंग'' की माँग करे। यहाँ यह ध्यान रहे कि 'जर्मनी में 2002 में ही NEDAP के माध्यम से ऐसा प्रयोग किया जा चुका है तथा नीदरलैंड व फ्रांस में भी इस दिशा में सकारात्मक पहल हो चुकी है''।[6]

यह सच है कि सोशल मीडिया की प्रभावी भूमिका के बावजूद इसका नकारात्मक पक्ष भी यदा–कदा उजागर होता रहता है। प्रख्यात लेखक मिचियो काकू ने ''फिजिक्स ऑफ द फ्यूचर में लिखा है कि – ''1991 में सोवियत संघ के विघटन का बडा कारण फैक्स मशीनों और कम्प्यूटर्स का उदय था, जिसके सहारे वर्गीकृत सूचनाओं को एक्सपोज किया गया। वर्ष 2011 के आसपास मिस्त्र, रोमानिया सहित विश्व के अनेक देशों में हुई क्रांतियों में सोशल नेटवर्किंग और स्मार्टफोन टेक्नॉलॉजी की बड़ी भूमिका मानी जाती है''।[7]

''इंटरनेट के राजकीय कार्यकार्ता'' – यह नवीन संकल्पना बराक ओबामा के नक्शे कदम पर भारत में भी रच बस गई है। कुछ जगह यदि इसका सकारात्मक उपयोग हो रहा है, तो कुछ जगह ''ट्रोलिंग'' जैसे रुप में नकारात्मक स्वरुप भी दिखलाई दे रहा है। हाल ही में संपन्न अमेरिकी राष्ट्रपति के चुनाव और राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंम्प की जीत के पीछे रुसी कम्प्यूटर्स की भूमिका भी सवालों के घेरे में रही है।

भारत मे भी सोशल मीडिया के गलत इस्तेमाल का चलन दिन–प्रतिदिन बढ़ता चला जा रहा है – मुजफ्फरपुर व काश्मीर की घटनाएँ तथा हार्दिक पटेल के आंदोलन के समय इंटरनेट सेवाओं पर प्रतिबंध आदि इसके प्रत्यक्ष प्रमाण है। सोशल मीडिया के माध्यम से नफरत भरे संदेशों के प्रसारित होने का अपरिपक्व मनों पर काफी विपरीत प्रभाव पड़ता है। किसी जानकार ने सच ही कहा है कि ––''सोशल मीडिया आधारित समाज में इंजीनियर तो बहुत बन जाएंगें, किंतु लेखक व कलाकार की कमी होती चली जाएगी और समाज में संवेदनहीनता बढ़ने का संकट बढ़ता जा रहा है''।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि वर्तमान सरकार ''डिजिटल इंडिया'' के लक्ष्य को हासिल करने हेतु जी–तोड़ कोशिश कर रही है एवं ''डिजीटल निर्वाचन व्यवस्था'' इस सपने को साकार करने का एक महत्वपूर्ण माध्यम बन सकती है। स्वयं प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदीजी डिजिटल इंडिया के अपने अभियान को लेकर काफी उत्साहित नजर आते हैं। कुछ दिनों पूर्व ओरेकल के सी.ई.ओ. साफा कात्ज ने इस सरकार को ''तकनीक का तलबगार'' बताया था, जो डिजिटल अनुभव की ओर मुड़कर नागरिकों को सशक्त बना रही है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आज सोशल मीडिया द्वारा भारतीय लोकतंत्र व निर्वाचन प्रक्रिया को नवीनता प्रदान की जा रही है और यह जन–मन की आवाज के रुप में सशक्त बनकर उभर रहा है। वस्तुतः सोशल मीडिया अपार संभावनाओं, व्यापक उपयोगिताओं व अत्यधिक विस्तार वाला क्षेत्र है तथा स्वस्थ लोकतांत्रिक मूल्यों एवं आदर्शों के निर्माण, विकास व सुदृढ़ीकरण में इसकी पारदर्शी एवं निष्पक्ष भूमिका परम आवश्यक है, क्योंकि मीडिया ही वस्तुस्थिति का वास्तविक प्रतिबिंब या दर्पण होता है।

संदर्भ :

(1) जैन, संजीव कुमार : मीडिया लेखन एवं जनसंचार।

(2) *वर्मा, कैलाश : जनजागरण में सोशल मीडिया का महत्व, प्रतियोगिता दर्पण, जुलाई 2017.*

(3) *Social Media in Indian Politics, The New York Times, June 09, 2014.*

(4) *इंडिया टुडे, 31 मई 2017.*

(5) *महाराष्ट्र टाईम्स, 26 अगस्त 2017.*

(6) *Alexander Baltatzis, Mexander Georgili, Humming Cyon : Analysis of Current Net Voting System and a design for a Swidish System.*

(7) *''कुरुक्षेत्र'', मार्च 2017, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली।*

❁ ❁

UGC Approved Journal
Research Link
Since March 2002
An International, Registered & Referred Monthly Journal : Political Science
Research Link - 163, Vol - XVI (8), October - 2017, Page No. 90-92
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

भारतीय राजनीति - निर्णायक मोड़ पर

प्रस्तुत शोधपत्र में भारतीय राजनीति की दिशा एवं दशा का भूतकाल, वर्तमान एवं भविष्य के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन किया गया है, इसमें राजनीति के स्वरुप में जो परिवर्तन आ रहे हैं, उनका बुनियादी स्तर पर विश्लेषण किया गया है। राजनीति की नई परिभाषा जो मूल्यहीन होती जा रही है, जिसमें विचारों के समानता हेतु भी गठबंधन की आवश्यकता महसूस की जा रही है, आज का राजनीतिक परिवेश विकास के दृष्टिकोण से सोचता है, परंतु आज विचारों की जो एक श्रृंखला बन गई है, उसे कार्यरुप देना एक चुनौती है। उपनिवेश से मुक्ति के बाद महात्मा गाँधी द्वारा बताये गये मार्ग की ओर लौटना आज प्रासंगिक हो गया है।

डॉ.अमिता बख्शी* एवं डॉ.प्रमोद यादव**

अध्ययन का उद्देश्य :

(1) स्वाधीनता के बाद भारतीय राजनीति के मूल्यों में किस प्रकार से परिवर्तन हो रहे हैं।

(2) महात्मा गाँधी द्वारा बताए गए विचारों का हमने अपनी योजनाओं में कहाँ तक शामिल किया है ?

(3) भारतीय राजनीति में नैतिक, चारित्रिक पतन, धर्म एवं जाति की भूमिका तथा सामन्ती प्रवृत्ति की दशा क्या है ?

(4) भारतीय राजनीति में क्या वैचारिक स्तर पर गिरावट आई है ?

(5) भारतीय राजनीति ने क्या गाँधीजी का मार्ग छोड़कर हमने यूरोपियन तार्किक वैधानिक समाज का रास्ता अपना लिया है?

(6) भारतीय राजनीति में क्या पूँजीवादी और नव–उपनिवेशवादी शक्तियों की घुसपैठ हो गई है?

उपकल्पना :

प्रस्तुत शोधपत्र में भारत की वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य को उसके भूतकाल, वर्तमान दशा तथा भविष्य की आकांक्षाओं के परिप्रेक्ष्य में देखा गया है कि इस देश की सामाजिक सांस्कृतिक संरचना फेडरल है। इस देश की विविधता स्वायत्त भी है और एकीकृत भी। यही उपकल्पना इस शोध पत्र में निर्धारित की गई है।

अध्ययन पद्धति :

प्रस्तुत शोध पत्र के लिए द्वितीयक स्त्रोत का उपयोग किया गया है।

राजनैतिक पर्यावरण की वर्तमान दशा : स्वाधीनता के बाद भारतीय राजनीति के रंग उभरकर आये हैं। इनका क्रम भी धीरे–धीरे विकसित हुआ है, पर कुछ बातें बड़ी साफ रही है। भारतीय स्वाधीनता आंदोलन के समय स्वतंत्र भारत के लिए सोचे गए मुद्दे अब बदल गए हैं। उस समय देश के सामाजिक नैतिक मूल्यों का और दूसरी दुनिया के देशों की तरह विकास के मुद्दे प्रमुख मुद्दे थे। संविधान ऐसा हो, जो इन दोनो मुद्दों को समा सके इस का ध्यान रखा गया था। इसीलिए संवैधानिक व्यवस्थाओं को सामाजिक परिवर्तन का दस्तावेज भी कहा गया था। भारतीय नैतिक सामाजिक पक्ष के सरोकार महात्मा गाँधी थे और विकास के सरोकार जवाहर लाल नेहरू। देश विभाजन के बाद जो शक्तियाँ उभरी उनका संबंध हिन्दू कट्टरवादी ताकतें भी थी। इन ताकतों की दो पृष्ठभूमि थी। पहली शताब्दी के दूसरे दशक में राष्ट्रीय सेवक संघ का बनना और सावरकर तथा गोंलवालकर द्वारा हिन्दू जातीय प्रभुता की विचारधारा का संगठन। जर्मनी में फासीवादी ताकतों के उदय के साथ दुनिया के बहुत से देशों में जातिवादी भावनाएँ उभरी थी। हिन्दू कट्टरवाद के उदय की जड़ इतिहास की उस रचना के साथ जुड़ी।

दूसरे पाकिस्तान के विभाजन के बाद वहाँ से बहुत से लोग विस्थापित हुए और जब ये विस्थापित इस देश में आए, तो उनका विभाजन के प्रति गुस्सा स्वाभाविक था। ऐसा तबका संवैधानिक निरपेक्षता को मानने के लिये तैयार नही था। जनसंघ उनकी भावनाओं को पूरा करने का सबसे सुलभ संगठन था। आज की भारतीय जनता पार्टी के बहुत से नेताओं की हिन्दू जातीय भावना इन दोनों संदर्भो के साथ जुड़ी हुई है। मुसलमान क्योंकि विभाजन के बाद पस्त हों चुके थे–राजनीति की किसी मुख्य धारा के अंग नहीं बने हों, वोटों के साधन के रूप में उनका विकास अवश्य हुआ। भारतीय राजनीति मे सांप्रदायिकता और धर्म निरपेक्षता को चुनौती भी इन्ही संदर्भो के साथ जुड़ी हुई है।

**प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान विभाग), शासकीय दिग्विजय स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, राजनांदगांव (छत्तीसगढ़)*
***सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान विभाग), सेठ आर.सी.एस. कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, दुर्ग (छत्तीसगढ़)*

राजनैतिक प्रदूषण की दिशा :

(1) नैतिक चारित्रिक पतन : देश के स्वाधीनता आन्दोलन के प्रमुख वाहक संगठन कांग्रेस के स्वाधीनता के बाद उसके नैतिक–चारित्रिक पतन की चिन्ता गाँधीजी को स्वाधीनता से पहले ही हो गई थी। उन्हें ऐसा लगने लगा था कि स्वाधीनता के बाद कांग्रेस का चरित्र स्वाधीनता आन्दोलन के मूल्यों पर आधारित नही होगा। गाँधी संभवतः प्रजातांत्रिक दलीय भूमिकाओं को समझते थे। इसीलिए उन्होंने कांग्रेस को आन्दोलन से दल में परिवर्तन के लिये कहा था। कांग्रेस लगभग दो दशक तक देश का प्रभुत्वशाली दल रहा। 1967 के बाद कांग्रेस का मिथक टूटना प्रारंभ हुआ और आज कांग्रेस को अपने अस्तित्व के लिये संघर्ष करना पड़ रहा है। अभी हाल के दशक तक भारत की राजनीति कांग्रेस संगठन और उसके नेताओं के इर्द–गिर्द केन्द्रित थी। राजनीति की कांग्रेस धुरी का परिणाम ही गैर–कांग्रेसवाद था जो समाजवादियों की रणनीति भी थी। प्रजातंत्र में प्रभुत्ववाद को तोड़ना आवश्यक भी था। यह बात दूसरी है कि रिक्त स्थान की पूर्ति कौन करता है ? दुर्गुणों को दूर करने के लिए डा.राममनोहर लोहिया का सुधारों या टूटो का सिद्धांत गाँधी की नैतिक चारित्रिक मांग का एक विचित्र उदाहण था। बहरहाल भारतीय राजनीति अब नैतिक चारित्रिक आधार को गम्भीरता से लेती भी नहीं है।

(2) धर्म और जाति : भारतीय राजनीति के वर्तमान दो आधार धर्म और जातियों ही नहीं उभर गए हैं। धर्म के आधार पर बंटवारे की राजनीति की समाप्ति के बाद भारत का मुसलमान गरीब तबके का मुसलमान था। भारत के मुस्लिम लीग नेता हिन्दुस्तान छोड़ चुके थे। भारतीय सामाजिक राजनीतिक व्यवस्था मे उनका दर्जा अल्पसंख्यकों का बना। पाकिस्तान बनने के बाद उनके प्रति घृणा कई संदर्भों मे उभरी। यही से सुरक्षा के लिए किसी पार्टी का दामन थामने का सिलसिला भी शुरू हुआ। प्रारंभ में कांग्रेस का हाथ उन्होंने थामा। पर यह साथ देर तक नहीं रह सका। इतनी बड़ी वोट बैक के प्रति किस को मोह नहीं होता ? इस वोट बैंक का मोह आज भी कुछ ऐसा ही है। मुसलमानों की मानसिकता दलों मे अपनी सुरक्षा ढूंढने का प्रयास है और दलों का प्रयास अपने को निरपेक्ष बता कर वोट लूटने का। कट्टरवादी हिन्दू दल जब मुसलमानों के वोट प्राप्त करने की बात कहता तो उसके पीछे वोट दोहन की भावना ही है।

भारतीय सामाजिक संरचना की सबसे मजबूत संस्था जाति राजनीति को प्रारंभिक दशक में बहुत अधिक प्रभावित नहीं कर पाई थी, पर सत्ता का जातियों में बंटवारा प्रारंभ हो गया था। राजनीति मे जाति संतुलन की बात कही जाने लगी थीं। आज के आरक्षण और जाति राजनीति का दोष प्रायः डॉ.राममनोहर लोहिया पर थोपा जाता है। डॉ.लोहिया जाति व्यवस्था के विरूद्ध थे। गाँधी और मार्क्स के समन्वय को वे अंततः वर्ग संरचना में बदलना चाहते थे। डॉ. लोहिया ने पिछड़ों को विशेष अवसर की बात कही थी। डॉ.लोहिया के अनुसार अवसर की यह योजना संरचना का स्थायी रूप नही था। अवसरों का उद्देश्य नव–ब्राम्हणवाद को भी पैदा करना नहीं था। वे शूद्र मुसलमान और औरतों को वे विशेष अवसर के लिए पात्र मानते थे। डॉ. लोहिया की सामाजिक–आर्थिक विश्लेषणता को तोड़–मरोड़ दिया गया। आरक्षण की राजनीति अवसर की राजनीति का विकृत स्वरूप है। प्रजातंत्र की चुनावी राजनीति ने जातियों के ध्रुवीकरण का अवसर भी पैदा किया। सत्ता के जाति बंटवारे के रहते–सत्ता प्राप्ति के लिये जाति समूहों का ध्रुवीकरण बाद में राजनीतिक दलों के रूप में बदल गया। यही ध्रुवीकरण कई प्रकार से भारतीय राजनीति पर हावी भी है। यह ध्रुवीकरण स्पष्टतः बड़ी जातियों, पिछड़ी जातियों और अनुसूचित जातियों के बीच है। अनुसूचित जनजातियाँ क्योंकि जाति संरचना से बाहर है। अतः ध्रुवीकरण से उनका न तो कोई संबंध है और न ही भारतीय राजनीति में वे इतनी महत्वपूर्ण है। जिन क्षेत्रीय राजनीतिक दलों की आज तक हम बात करते है वे भी कही न कही धार्मिक समूहों और जातियों के ध्रुवीकरण के साथ जुड़े हुए है। सत्ता के जाति दबाव समूह आज शक्तिशाली है। यह भी एक तथ्य है कि इतिहास मे सत्ता मे रही सामंती जातियाँ आज भी राजकाज उसी धूर्तता के साथ चलाती है, जैसे कि वे सामंती शासन चलाया करती थी। धूर्तता की यह राजनीति बड़ी विलक्षण है, जिसमें राजनीति चलाने वालो के छिपे इरादे कभी सामने नहीं आते। अपने को बनाए रखने का एक गुप्त समझौता इन जातियों मे है। जातियों का यह ध्रुवीकरण जातीय राजनीति को उभार गया है।

(3) सामंती प्रवृत्ति : यह कहा जा सकता है कि देश प्रजातंत्र बना अवश्य, पर दो सामंती प्रवृत्तियां बराबर चलती रही। पहली प्रशासन मे घालमेल और अपराधियों को संरक्षण। इस देश मे यह काम सत्ता पक्ष और विपक्ष दोनों ने ही किया है। उपर से भले ही इन दो प्रवृत्तियों की निन्दा हो पर दलों की आधिपत्य इन पर रही है और आज भी है। इस वृद्धि से प्रजातंत्रीय नेतृत्व का चरित्र ही बदल गया है। उस बौद्धिक आधार मे कमी आई है जो देश के प्रति चिन्तन को प्रखर कर सके। संसद मे हंगामों का शोर अधिक है, गंभीर चिन्तन कम।

इसी दृष्टि से राजनीति मे नव–पाखंडवाद की चर्चा भी आवश्यक है। नई राजनीति से पहले पाखंडवाद का सन्दर्भ धार्मिक चर्चा कृत्यो के साथ अधिक जुड़ा हुआ था। सत्ता का पाखंड निन्दनीय था और कथनी–करनी के अंतर सामाजिक मूल्यों में निम्नतम थे। नवपाखंडवाद भारतीय राजनीति का अब एक अनन्य हिस्सा है। गाँधी के मूल्य आचरण की शुद्धता के साथ जुड़े हुए थे। आचरण की शुद्धता अब उन लोगों में भी नहीं है, जो धर्म और भारतीय संस्कृति के नाम पर राजनीति चला रहे हैं।

(4) वैचारिक स्तर : भारतीय राजनीति चरित्र की सबसे बड़ी गिरावट वैचारिकी स्तर पर है। दलों और समूहों का वैचारिकी आधार टूटा है। ऐसा लगता है कि वैचारिकी स्तर पर हर दल मे भ्रांतियाँ हैं। वे समझ नहीं पा रहे हैं, राष्ट्र की वर्तमान सामाजिक सांस्कृतिक संरचना मे कोई पुख्ता राजनीतिक वैचारिकी हो ? वस्तुतः वैचारिकी नीतियों और कार्यक्रम सभी को एक दूसरे के बिना किसी अन्तर्विरोध के दिखाई देते हैं। भाषाएँ संस्कृत और राष्ट्रभक्ति जैसे प्रश्न एक सुर के ही हैं। प्रजातंत्र में दो वैकल्पिक विचारधारा, साथ–साथ चलती है। विकल्प के नाम पर विचार और कर्म की दृष्टि से भाजपा और कांग्रेस अथवा वामपंथियों के बीच कोई विशेष अंतर नजर नहीं आता। विचारधाराओं के बीच समान सेतु निर्मित हो चुका है और राजनीतिक अवसरों के लिए और

अधिक हो रहा है। समान सेतु ने विभिन्न दलों के बीच के अंतर को धुंधला और स्पष्ट कर दिया है।

विचारों के इसी समान सेतु ने अजीब गठबंधन भी पैदा किए हैं। यह कहा जाने लगा है कि भविष्य की राजनीति अब गठबंधन की राजनीति है। पर ये गठबंधन अधिकांशतः सिद्धांतों के मूल सिद्धांत से समझौता करने के बाद ही स्थापित हुए है। हिन्दूत्व और समाजवादियों का क्या साथ ? पर ऐसा हुआ है। धार्मिक कट्टरता एक साथ जुड़े तो बात समझ में आती है। भारतीय जनता पार्टी–अकाली और मुस्लिम लीग का गठबंधन निश्चित ही सैद्धान्तिक होगा पर कांग्रेस मुस्लिम लीग का गठबंधन प्रश्नों के घेरे में आ ही जाता है। केवल सत्ता चलाने के लिए गठबंधन स्थायी भी नहीं होते, अतः राजनीति में अस्थायित्व का दौर आना स्वाभाविक है।

भारतीय राजनीति के अब तक दो रास्ते रहे हैं। एक तो राजनीति स्वतंत्रता आंदोलन के मूल्यों के आधार पर नैतिक चारित्रिक आधारों पर स्थापित होती। ऐसी अवस्था में हमें गाँधी के मूल्यों और अनुशासन स्वीकार करना पड़ता। ऐसी अवस्था मे आत्म नियंत्रण, चरित्र की शुद्धता औपनिवेशिक मानसिकता से मुक्ति; स्वदेशी और सत्ता का विकेन्द्रीकरण प्रमुख आधार होते। प्रारंभिक दशकों मे इनमे से कुछ आधार स्वीकार भी किए गए। गाँधी के नाम को बाद मे हिन्दूत्व शक्तियों ने भी प्रयोग किया, पर गाँधी की उनकी समझ प्रचारात्मक अधिक सिद्ध हुई। उपनिवेशवाद से मुक्ति के बाद गाँधी का रास्ता पहला रास्ता था। निश्चित ही इस रास्ते की पुर्नस्थापना बड़ा मुश्किल काम है।

दूसरा रास्ता वह है, जिस पर हम चल रहे हैं। यह रास्ता यूरोपियन तार्किक–वैधानिक समाज का रास्ता है। इस रास्ते मे नियमों की नैतिकता और अवसर का चरित्र है। यह रास्ता पारंपरिक समझ को नकार गया है और भारतीय सामाजिक रिश्तों मे दरार डाल गया है। व्यक्तिवादी यह राजनीति प्रश्नों के हल भी व्यक्ति स्तर पर ढूंढ़ना चाहती है। कल्पना की गई थी कि संवैधानिक समाजवाद विषमता को समाप्त कर समता के दृष्टिकोण स्थापित कर सकेगा। जातिए धर्म और स्त्री–पुरूष का विभाजन उस कल्पना के विपरीत है। यह कहा जा सकता है कि यह रास्ता अपने आप बना है, पर रास्ते के नायक खलनायक देश की राजनाति को कहा ले जाएंगे, यह कहना कठिन है। यह एक विचित्र परिस्थिति है, जिसमें प्रतिरोध कहीं नहीं है। राजनीतिज्ञों के लिये रास्ता सपाट है और क्योंकि गाँधी के सत्य का आग्रह अब प्रासंगिक नहीं–अन्याय को पचाने की पाचन–शक्ति में वृद्धि हुई है।

(5) मुक्ति के उपाय : गाँधी का रास्ता हम छोड़ आये हैं और वर्तमान राजनीति का रास्ता देशानुकूल नहीं। ये ही दोनों तथ्य तीसरे रास्ते की संभावना पर विचार करने को बाध्य कर रहे हैं। बहुत पहले लोहिया ने इस देश के चिन्तन के लिये कुछ प्रश्न उठाये थे,जिनका संबंध राजनीति की दशा और दिशा से था। यह कहना कठिन है कि लोहिया के वे सवाल आज कितने चिन्तन लायक है। पर उन मुद्दो की प्रासंगिकता अभी भी है। लोहिया को इस देश में पूँजीवादी और नव उपनिवेशवादी शक्तियों की घुसपैठ की चिन्ता थी। लोहिया का सवाल मातृभाषाओं की समृद्धता का था। इस देश में राजनीति क्या चुनावी राजनीति ही हो ? ये सभी सवाल अभी भी महत्वपूर्ण है।

निष्कर्ष :

हम एक ओर यह मानते हैं कि इस देश की सामाजिक सांस्कृतिक संरचना फेडरल है। इस देश की विविधता स्वायत्त भी है और एकीकृत भी। फिर भारतीय राजनीति में हम केन्द्रीयकरण की मांग क्यों कर रहे हैं ? सामूहिक उत्तरदायित्व को हम राष्ट्रपति के एकाधिकार मे क्यों परिवर्तन करना चाहते हैं। हमें इस देश के हर आदमी को दलों से प्रतिबद्ध करा देने से क्या प्राप्त होगा ? हमें इस देश के बौद्धिक चिन्तन को भी प्रतिबद्ध करा देने से क्या प्राप्त होगा ? हम इस देश के बौद्धिक चिन्तन को भी प्रतिबद्ध क्यों करना चाहते हैं ? ये सभी प्रश्न इस देश की राजनीति के लिए महत्वपूर्ण प्रश्न है। राजनीति की नई दिशा इन्हीं प्रश्नों से निकल कर आयेगी। कट्टरवाद और निहायत ही लचीली व्यवस्था से अलग तीसरे रास्ते की तलाश पर चिन्तन उठना संभवतः इतिहास की नियती होगी।

सन्दर्भ :

(1) प्यारे लाल (2000) : महात्मा द लास्ट फेज, पृ. 54–55.

(2) सावरकर वीडी (1985) : हिन्दुत्व, पृ. 90–92.

(3) आंद्रे, ब्रिताई (2004) : सोसायटी एंड पोलिटिक्स इन इंडिया, पृ. 105–106.

(4) राजकिशोर (1987) : भारत लोहिया के बाद, पृ. 65–66.

(5) इन्डियन सोशल साइंस इन्स्टीटयूट कलकत्ता–एथनिक फेडरेलिज्म ऑफ इंडिया, 2001, पृ. 84–85.

(6) फड़िया, डॉ.बी.एल. (2013) : भारतीय शासन एवं राजनीति, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पृ. 22–25.

(7) मूल प्रश्न : भारतीय राजनीति निर्णायक मोड़ पर, जनवरी–मार्च 1997.

(8) वेददान, सुधीर (1997) : भारतीय राजनीति खतरनाक मोड़ पर, मूल प्रश्न, पृ. 2–6.

(9) लिब्रल टाइम्स, 4, अंक–2, 1996.

(10) भार्गव, नरेश (1997) : मूल प्रश्न, भारतीय राजनीति तीसरे रास्ते की तलाश, पृ. 25–30.

UGC Approved Journal
Research Link
Since March 2002
An International, Registered & Referred Monthly Journal : Political Science
Research Link - 163, Vol - XVI (8), October - 2017, Page No. 93-94
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

दुर्ग नगर पालिका निगम की प्रारंभिक कार्यकाल की समीक्षा

प्रस्तुत शोधपत्र में दुर्ग नगर पालिका निगम की प्रारंभिक कार्यकाल की समीक्षा की गई है। साथ ही शोधपत्र का मुख्य उद्देश्य दुर्ग नगर निगम को अपने उद्देश्यों की अभिपूर्ति में कितनी सफलता मिली है, उसका मूल्यांकन करना है। नगर निगम के कार्य को दो भागों में विभक्त किया गया है, अनिवार्य एवं ऐच्छिक कार्य। आधुनिकीकरण, औद्योगिकीकरण आदि प्रभावों के चलते बहुत से ऐच्छिक कार्य अब अनिवार्य कार्यों का रुप धारण करते जा रहे हैं। इसका सबसे बड़ा उदाहरण प्रदूषण और पर्यावरण सम्बंधित कार्य हैं। दुर्ग नगर निगम के कार्यकाल से सम्बंधित पार्षदों व महापौर के साक्षात्कार के बाद नागरिकों से साक्षात्कार लेकर निष्कर्ष ज्ञात किया गया है।

डॉ.एन.के.वैष्णव

प्रस्तावना :

नगरपालिका संस्थाएँ तृण मूल संस्थाएँ हैं। ये मतदाताओं के सीधे संपर्क में रहती हैं। इसीलिए इन्हें ग्रास रूट्स की संस्थाएँ कहते हैं। इन्हीं संस्थाओं में सक्रिय भागीदारी करके राजनीतिज्ञ विधान सभाओं में और संसदों मे बाद में चलकर भागीदारी करते हैं। इन ग्रास रूट्स या जमीनी संस्थाओं में कार्य करने का अनुभव उन्हें सफल विधायक, सांसद और मंत्री बनाता है। इसीलिए इन संस्थाओं को प्रायमरी पॉलिटिकल इंस्टीट्यूशन्स या राजनीति की प्राथमिक पाठशालाएँ कहते हैं। भारतीय संविधान में इन संस्थाओं का कोई उल्लेख नहीं किया गया था। यही कारण है कि राज्य सरकारें इनको जब चाहे स्थापित कर सकती थी और जब चाहे इनको भंग कर सकती थी। इनके वित्तीय साधन भी बहुत सीमित थे, जिससे ये संस्थाएँ विकास का कोई कार्य नहीं कर पाती थी।

दूसरी और योजनाओं के क्रियान्वयन में इन स्थानीय संस्थाओं की कोई भागीदारी नहीं रहती थी। नगरों के लिए योजनाएँ दिल्ली या भोपाल में बनती थीं। स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप एक भी योजना नहीं बनती थी। नौकरशाही, लालफीताशाही और भ्रष्टाचार में आकंठ डूबी रहती थी। योजनाओं का अधिकांश धन नौकरशाही और सत्तारूढ़ दल के राजनीतिज्ञों द्वारा हड़प लिया जाता था। केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा अरबों रूपये गाँवों और नगरों के विकास के लिए आबंटित किए जाते थे, किन्तु ये इन नगरों और ग्रामों के विकास में न लगकर नौकरशाहों और राजनीतिज्ञों की जेब में चला जाता था। सारांश में, दिल्ली और भोपाल में योजनाओं को बनाने के बजाय इन नगरीय और ग्रामीण योजनाओं के निर्माण का दायित्व स्थानीय संस्थाओं नगरीय और ग्रामीण संस्थाओं को सौंपने का निर्णय लिया गया। तृतीय पंचवर्षीय योजनाओं के बाद ही यह प्रश्न उठने लगा था कि अरबों खरबों खर्च करने के बाद भी नगरों में न अच्छी सड़के बनीं, न स्वास्थ्य सेवाओं का विकास हुआ, न शिक्षा का विस्तार हुआ, बाजार हाट, पेयजल, बिजली, झुग्गी–झोपड़ियों बसाहट, बाग–बगीचे, खेल के मैदान आदि–आदि क्षेत्रों में विकास होना तो दूर अव्यवस्था मची रही।

नगर पालिका निगम का उदय :

राजीव गाँधी के काल में ही योजनाओं को विकेंद्रित करने का प्रयास किया गया और उसके लिए विधेयक भी पेश किया गया। यह विधेयक जाकर प्रधान मंत्री नरसिम्हा राव के शासन काल में 1994 में पारित हुआ। मध्यप्रदेश सरकार ने 1994 मे उस संवैधानिक संशोधन अधिनियम के आधार पर नगर पालिका अधिनियम 1994 पारित किया। यह संवैधानिक संशोधन था। इस प्रकार से नगर पालिकाओं की व्यवस्था अब भारतीय संविधान का अंग बन चुकी हैं। इस व्यवस्था में बगैर संवैधानिक संशोधन लाये, नगर पालिकाओं के अधिकारों और शक्तियों में कमी नहीं की जा सकती। राज्य सरकारों को अब इन नगरपालिकाओं को जब चाहें तब भंग करने का अधिकार नहीं है। 1994 में इस संवैधानिक संशोधन अधिनियम के आधार पर नगर पालिका अधिनियम 1994 पारित किया।

राज्य निर्वाचन आयोग की स्थापना की गयी। इस आयोग ने पहला निर्वाचन 1994 में कराया और उसी के आधार पर दुर्ग नगर पालिका निगम का गठन हुआ।

नगर निगम (निर्वाचित) का पहला कार्यकाल पाँच वर्षों का 1994–99 में पूरा हुआ। 1999 में दुर्ग नगर निगम का पुनः निर्वाचन हुआ और यह संस्था अब लगभग 2 वर्षो से कार्यरत है।

नगर निगम स्वायत्त संस्थाएँ हैं। नगर के भीतर विकास के कार्यों को संपन्न करने के लिए इनके पास पर्याप्त धन भी होता है। दुर्ग नगर निगम का आय–व्यय लगभग साठ–पैंसठ करोड़ रूपये का होता है।

लोगों को निर्वाचित निगम से काफी आशाएँ थी। मतदाताओं ने पार्षदों और महापौर का निर्वाचन किया था। पार्षदों और महापौर से यह आशा थी कि वे नगर के विकास के लिए काफी कुछ करेंगे, किन्तु वैसा कुछ भी नहीं हुआ। पार्षद और महापौर अपने

सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान विभाग), सेठ आर.सी.एस.कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, दुर्ग (छत्तीसगढ़)

क्षेत्र के विकास के लिए बहुत कुछ कर रहे हैं और करेंगें, ऐसा दावा हर महापौर और पार्षद कर रहे हैं। दूसरी ओर जनता इन दावों से बिल्कुल ही संतुष्ट नहीं है कि वह पार्षदों के कार्य से संतुष्ट नहीं है। नागरिकों की अधिकांश समस्याओं का निराकरण नहीं हुआ है। पार्षद और महापौर आपस में लड़ते रहते हैं। निगम उन स्वार्थों और दलबंदी का अखाड़ा बना हुआ है। निगम के दफ्तर लालफीताशाही और भ्रष्टाचार के गढ़ है।

निर्वाचन का आधार : दुर्ग नगर, छत्तीसगढ़ का एक प्रमुख नगर है। 1999 में दुर्ग नगर निगम का निर्वाचन हुआ। राज्य निर्वाचन आयोग ने इस निर्वाचन में प्रमुख भूमिका अदा की। कलेक्टर ने वार्ड विभाजित करवाया। 1999 के अधिनियम में आरक्षण के आधार पर वार्डों का विभाजन किया। अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़ी जातियाँ, महिलाएँ और सामान्य महापौर का पद महिलाओं के लिए आरक्षित कर दिया गया। इस आरक्षण के चलते उम्मीदवारों और दलों को भारी परेशानी हुई। पूर्व पार्षदों को अपना भाग्य आजमाने के लिए बाध्य होना पड़ा। इस आरक्षण व्यवस्था का यह दोष है कि जिस पार्षद ने काफी मेहनत करके अपने वार्ड में विकास का काम किया था और उसे पूरी उम्मीद थी कि उसे उस वार्ड से फिर से निर्वाचित किया जाएगा। उसे बड़ी निराशा हुई, जब उसे आरक्षण के कारण अपने वार्ड से हटना पड़ा और दूसरे वार्ड की तलाश करनी पड़ी।

महापौर का पद भी आरक्षण की चपेट में आने के कारण कई प्रभावशाली नेताओं को निराश होना पड़ा। यह सर्वोच्च पद महिलाओं के लिए आरक्षित होगा या इस पद पर अब सीधे निर्वाचन होना था, इसलिए महिला प्रत्याशियों को प्रचार के लिए कड़ा परिश्रम करना पड़ा।

अंत में चुनाव के नतीजे निकले और महापौर पद पर सरोज पांडे निर्वाचित हुई। 51 वार्डों से पार्षद भी निर्वाचित हुए। चुनाव में भारी गहमा–गहमी, उखाड़–पछाड़ रही। नगर निगम के अन्य कार्यों की कड़ी आलोचना की जा सकती है, किंतु इस चुनाव का एक सबसे बड़ा योगदान है, मतदाताओं में राजनैतिक जागृति। राजनैतिक जागृति एक महान लोकतंत्रीय मूल्य है। इसके बिना सब नष्प्राण है, मनुष्यों का समूह होते हुए भी वह एक शमशान है। निगम का यह चुनाव लोगों का बाध्य कर देता है कि वे नगरीय समस्याओं पर गहराई से विचार करें, अपना सुझाव दें।

महापौर नगर निगम शीर्ष पर होता है और नगर के अधिकांश राजनैतिक सामाजिक कार्यक्रमों में उसे बुलाया जाता है। एक सभापति भी होता है। दूसरे अतिरिक्त पार्षद होते हैं। महापौर समस्त नगर के विकास के लिए उत्तरदायी होता है और लोगों की आँखें उसी की ओर लगी रहती है, तो पार्षद अपने अपने वार्ड का प्रतिनिधित्व करते हुए अपने वार्ड की समस्याओं को उठाते हैं।

कार्य प्रणाली : नगर निगम के कार्य को मोटे तौर पर दो भागों में विभक्त किया गया है, वे कार्य जिनको अनिवार्य कहा जाता है, जिन्हें निगम को ही करना चाहिए और दूसरे वे कार्य जिनका ऐच्छिक कार्य कहा जाता है और जिन्हें निगम कर भी सकती है और नहीं भी कर सकती। किन्तु, आधुनिकीकरण औद्योगीकरण आदि प्रभावों के चलते बहुत से ऐच्छिक कार्य अब अनिवार्य कार्यो का रूप धारण करते जा रहे हैं। इसका सबसे बड़ा उदाहरण प्रदूषण और पर्यावरण से सम्बन्धित कार्य है। अधिनियम आज से दस वर्ष पूर्व बना था। अतएव इस कार्य का उतना बल नहीं दिया गया था, किन्तु आज यह कार्य सबसे महत्वपूर्ण कार्य बन चुका है। सड़कों के किनारे वृक्षारोपण किया जाय, सड़कों पर धूल, गंदगी, कीचड़ न जमे, नालियों का प्रवाह ठीक रहे, उनकी सफाई होती रहे।

अन्य एक कार्य जिसे जानकर भी अधिकांश नगर निगमों ने अनदेखी या अवहेलना की है, वह है प्लास्टिक कचरा। इससे भविष्य में भारी प्रदूषण फैलेगा। निगम की समितियाँ साल भर कार्य करती रहती हैं। सामान्यतः माह में एक बैठक होनी ही चाहिए। 1994 के पूर्व अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़ी जातियों और महिलाओं को उतना महत्व नहीं दिया जाता था, अब इनको आरक्षण मिलने लगा है। इससे इन वर्गों में भारी राजनीतिक जागृति आ गई है और दुर्ग नगर निगम में तो महिला ही महापौर है। हर महिला आरक्षित वार्ड में महिलाओं ने पार्षद पद को प्राप्त करने जोरदार संघर्ष हुआ था। यह कहना अब कोई अर्थ नहीं रखता कि महिलाएँ राजनीति में कोई रूचि नहीं रखती। पंचायतों और नगर निगमों के चुनाव ने सिद्ध कर दिया कि वे बहुत अधिक रूचि रखती है और संसद और विधान सभाओं में उनको आरक्षण मिलना ही चाहिए।

निगम के कार्यों की सफलता विफलता इस बात पर निर्भर करती है कि उसका बजट कैसा है। भ्रष्टाचार और लालफीताशाही के चलते निगम विविध आय के स्त्रोंतो का ठीक से दोहन नहीं कर सकती। आय और व्यय में संतुलन स्थापित करने के लिए निगम के पार्षदों, महापौर, कर्मचारी, अधिकारियों आदि में जब तक अनुशासन की भावना नहीं आती, तब तक जनता के पैसों की अफरा–तफरी की प्रवृत्ति कम नहीं होती, तब तक प्रतिवर्ष निगम की हालत बिगड़ती ही चली जाएगी। पुस्तकों की सूची तैयार करने में नगर लोक पत्रिका जो इंडियन इंस्टीटयूट ऑफ पब्लिक एडमिनिस्टेंशन से प्रकाशित हो रही है के विशेष अंक का उपयोग किया गया है। पुस्तकें 1980 तक और कुछ ही पुस्तकें 1990 तक की है और इनमें 1994 के नगर निगम अधिनियम और आज की बदली हुई परिस्थितियों का कोई जिक्र नहीं है। लेखों और घटनाओं के लिये नगर निगम कार्यालय में जो समाचार पत्रों की कतरने रखी जाती है, उनका बहुत अधिक प्रयोग किया गया है। इनमें दुर्ग नगर निगम के कार्यों पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ता है।

निष्कर्ष : अतःयह कहा जा सकता है कि दुर्ग नगर का विकास हेतु नगर निगम का गठन होना आवश्यक था। दुर्ग नगर पालिका निगम के उदय होने से दुर्ग नगर छत्तीसगढ़ के विकसित नगरो में शामिल किया गया, जिसके द्वारा यहाँ के लोगों को विभिन्न आवश्यक सुविधाएँ प्राप्त हुई।

संदर्भ :

(1) बजट–नगर पालिका निगम, दुर्ग 1999–2000. ***(2)*** *बजट–नगर पालिका निगम, दुर्ग 1998–1999.* ***(3)*** *नगर पालिका निगम की समितियों के कार्य वृत 2000–2001.* ***(4)*** *राज्य निर्वाचन आयोग कार्यालय दुर्ग, निर्वाचन 1999.* ***(5)*** *नगर पालिका अधिनियम 1994.* ***(6)*** *शतायु दुर्ग 1906–2006 जिला प्रशासन दुर्ग पृष्ठ क्र. 1 से 12.*

❁ ❁

UGC Approved Journal
Research Link
Since March 2002
An International, Registered & Referred Monthly Journal : Political Science
Research Link - 163, Vol - XVI (8), October - 2017, Page No. 95-96
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

16 वीं लोकसभा के आम चुनाव 2014 में राजनीतिक दलों की स्थिति की समीक्षा

प्रस्तुत शोधपत्र में 16वीं लोकसभा के आम चुनाव 2014 में राजनीतिक दलों की स्थिति की समीक्षा की गई है। केन्द्रीय निर्वाचन आयोग द्वारा 17 मई 2014 को घोषित किए गए अंतिम चुनाव परिणामों के अनुसार राष्ट्रीय दलों के रुप में मान्यता प्राप्त भारतीय जनता पार्टी को शानदार सफलता मिली, जिन्होंने कुल 282 सीटों पर विजय प्राप्त की तथा कुल मतदान का 31.1 प्रतिशत मत प्राप्त किया। भाजपा की इस सफलता के पीछे का सारा श्रेय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की राष्ट्रव्यापी लहर व कुशल नेतृत्व को जाता है।

गणेश राम* एवं डॉ.धर्मपाल सिंह**

केन्द्रीय निर्वाचन आयोग द्वारा 16वीं लोकसभा के लिए 07 अप्रैल से 12 मई 2014 के दौरान 9 चरणों में सम्पन्न कराये गए चुनाव परिणामों पर नजर डालने पर विभिन्न राजनीतिक दलों की स्थिति स्पष्ट होती है। यहाँ राजनीतिक दलों की स्थिति की समीक्षा करने से पहले कुछ मुख्य महत्तवपूर्ण तथ्य 16वीं लोकसभा से सम्बन्धित प्रस्तुत किए जा रहे हैं, जो निम्नलिखित हैं :

(1) 16वीं लोकसभा के 543 स्थानों (जिमें 423 सामान्य चुनाव क्षेत्र, 79 अनुसूचित जाति के चुनाव क्षेत्र तथा 41 अनुसूचित जनजाति के चुनाव क्षेत्र) के लिए चुनाव हुए।

(2) मतदाताओं की कुल संख्या – 83,41,01,479

(3) कुल पुरूष मतदाताओं की संख्या – 43,70,51,538

(4) कुल महिला मतदाताओं की संख्या – 39,70,49,941

(5) 16वीं लोकसभा के आम चुनाव में 1951–52 के आम चुनावें से लेकर अब तक का सर्वाधिक मतदान (66.40 प्रतिशत) हुआ।

(6) कुल पुरूष व महिला मतदान प्रतिशत क्रमशः 67.09 व 65.63 हुआ।

(7) 16 राज्य/केन्द्र शासित प्रदेशों में प्रतिशत के लिहाज से महिला मतदान प्रतिशत, पुरूष मतदान से अधिक रहा।

(8) 83,41,01,479 मतदाताओं में से 55,38,01,801 लोगों ने आम चुनाव 2014 में मतदान किया।

(9) लोकसभा के प्रत्याशियों के लिए चुनाव खर्च की सीमा अधिकतम 70 लाख थी।

(10) 16वीं लोकसभा चुनाव में कुल 464 राजनीतिक दलों के प्रतिभागियों ने चुनाव लड़ा, जिनमें 6 राष्ट्रीय दल, 39 राज्य स्तरीय दल तथा 419 गैर मान्यता प्राप्त दल शामिल हुए।

(11) इस आम चुनाव में कुल 8,251 उम्मीदवारों ने अपना भाग्य आजमाया, वहीं 1952 के आम चुनाव में 489 सीटों के लिए उम्मीदवारों की संख्या 1,874 थी।

(12) इस आम चुनाव में 'इलेक्ट्रोनिक वोटिंग मशीन (EVM)' में उपरोक्त में से कोई नहीं (NOTA) का भी पहली बार प्रयोग किया गया।

16वीं लोकसभा के चुनाव में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (भाजपा के नेतृत्व वाला) ने 336 सीटों पर विजय व कुल मतदान का लगभग 37 प्रतिशत मत प्राप्त किया। वहीं संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (कांग्रेस के नेतृत्व वाला) को केवल 59 सीटें व कुल मतदान का लगभग 23 प्रतिशत हिस्सा ही प्राप्त हुआ।

केन्द्रीय निर्वाचन आयोग द्वारा 17 मई 2014 को घोषित किए गए अन्तिम चुनाव परिणामों के अनुसार राष्ट्रीय दलों के रूप में मान्यता प्राप्त भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) को शानदार सफलता मिली, जिन्होनें कुल 282 सीटों पर विजय प्राप्त की तथा कुल मतदान का 31.1 प्रतिशत मत प्राप्त किया। भाजपा की इस सफलता के पीछे का सारा श्रेय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की राष्ट्रव्यापी लहर व कुशल नेतृत्व को जाता है।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को इस आम चुनाव में करारी हार झेलनी पड़ी तथा उनकी सीटों की संख्या 44 तक सिमट कर रह गयी तथा उसको कुल मतदान का केवल 19.31 प्रतिशत हिस्सा ही प्राप्त हुआ तथा उसकी स्थिति ऐसी रही कि मुख्य विपक्षी दल का दर्जा भी प्राप्त नहीं हो सका।

राष्ट्रीय दल का दर्जा प्राप्त अन्य दलों में वाममोर्चे को 12 स्थान तथा कुल मतदान का 4.8 प्रतिशत हिस्सा प्राप्त हुआ जिसमें दो मुख्य दलों भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी (CPI-M) को 9 सीटें व कुल मतदान का 1.66 प्रतिशत मत तथा भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी (CPI) को एक सीट व कुल मतदान का 0.18

**शोधार्थी **शोध-निर्देशक, पं.नवलकिशोर राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दौसा*

प्रतिशत मत प्राप्त हुए। राष्ट्रीय स्तर की एक अन्य पार्टी राष्ट्रवादी काग्रेंस पार्टी (NCP) को 6 सीटें प्राप्त हुई। वहीं राष्ट्रीय दल की मान्यता प्राप्त बहुजन समाज पार्टी (बसपा) को कोई सीट इस चुनाव में नहीं मिली।

इस प्रकार 16वीं लोकसभा के आम चुनावों में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के करिश्माई नेतृत्व वाली भाजपा को पूर्ण स्पष्ट बहुमत प्राप्त हुआ तथा अन्य दलों की स्थिति फीकी नजर आयी। भाजपा ने सम्पूर्ण भारत के लगभग प्रत्येक क्षेत्र से सीटों पर विजय प्राप्त की।

अन्य राज्य स्तरीय दलों व गैर–मान्यता प्राप्त दलों की स्थिति को नीचे सारणी के द्वारा स्पष्ट किया जा रहा है :

इस प्रकार 543 सीटों के लिए हुए लोकसभा चुनाव में भाजपा

16वीं लोकसभा के चुनाव परिणाम

पार्टी का नाम	विजय प्राप्त सीटों की संख्या	प्राप्त मतदान का प्रतिशत
भारतीय जनता पार्टी (बीजेपी)	282	
भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (आईएनसी)	44	
भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी–मार्क्सवादी (सीपीआईएम)	9	
भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी (सीपीआई)	1	31.1
राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी (एनसीपी)	6	19.31
आम आदमी पार्टी (एएपी)	4	1.66
ऑल इण्डिया अन्ना द्रविड़ सुनेत्र कषगाम (एआईएडीएमके)	37	0.18
ऑल इण्डिया एनआर कांग्रेस	1	
ऑल इण्डिया तृणमूल कांग्रेस	34	3.27
ऑल इण्डिया यूनाइटेड डेमोक्रेटिक फ्रंट	3	
बीजू जनता दल (बीजेडी)	20	3.84
इण्डियन नेशनल लोकदल (आईएनसीडी)	2	
इण्डियन यूनियन मुस्लिम लीग	2	1.71
जम्मू–कश्मीर पीपुल्स डेमोक्रेटिक पार्टी	3	
जनता दल (एस)	2	
जनता दल (यू)	2	
झारखण्ड मुक्ति मोर्चा (जेएमएम)	2	
केरल कांग्रेस (एम)	1	
लोक जनशक्ति पार्टी	6	
नागा पीपुल्स पार्टी	1	
नेशनल पीपुल्स पार्टी	1	1.10
पताली मस्कल काची (पीएमके)	1	
राष्ट्रीय जनता दल (आरजेडी)	4	
रिवोल्यूशनरी सोशलिस्ट पार्टी	1	
समाजवादी पार्टी (एसपी)	5	
शिरोमणि अकाली दल (एसएडी)	4	0.18
शिवसेना	18	
सिक्किम डेमोक्रेटिक फ्रंट	1	
तेलंगाना राष्ट्र समिति	1	3.31
तेलुगु देशम पार्टी	11	
ऑल इण्डिया मजलिस–इ–ईतेहदुल मुस्लिम	1	
अपना दल	2	2.95
राष्ट्रीय लोक समता पार्टी	3	
स्वाभिमानी पक्ष	1	
युवाजन श्रमिक रिथू कांग्रेस पार्टी	9	
निर्दलीय	3	
कुल	**543**	

स्त्रोत : केन्द्रीय निर्वाचन आयोग, भारत–सरकार।

के नेतृत्व वाले राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (एनडीए) को पूर्ण स्पष्ट बहुमत प्राप्त हुआ तथा प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने अपनी सरकार का गठन किया। इस चुनाव में निर्दलीय उम्मीदवारों में अब तक सबसे कम 3 उम्मीदवार ही निर्वाचित हुए। 16वीं लोकसभा के चुनाव में निर्वाचित महिला सदस्यों की संख्या 61 है।

निष्कर्ष :

15वीं लोकसभा में जहाँ संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (UPA) को 261 सीटों पर विजय प्राप्त हुई थी, जो 16वीं लोकसभा में मात्र 59 सीटों पर ही सिमट गयी। UPA के सबसे बड़े दल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को जहाँ 15वीं लोकसभा में 161 सीटें मिली थी, जो 16वीं लोकसभा में मात्र 44 सीटें ही जीत पायी।

15वीं लोकसभा में जहाँ एनडीए को 160 सीटें मिली थी, जो नरेन्द्र मोदी के करिश्माई नेतृत्व के कारण 16वीं लोकसभा में 336 सीटें जीतकर ऐतिहासिक विजय के साथ पूर्ण बहुमत प्राप्त किया। एनडीए के सबसे बडे दल भारतीय जनता पार्टी को 2009 के आम चुनाव में 117 सीटें मिली थी, जो 16वीं लोकसभा में 282 सीटों की शानदार विजय के साथ 30 साल बाद पूर्ण बहुमत के साथ स्थिर सरकार बनायी। अन्य दलों को जहाँ 2009 के आम चुनाव में 122 सीटें मिली थी, जिनकी सीटों की संख्या बढ़कर 16वीं लोकसभा में 148 तक पहुँच गयी, जिसमें एक राष्ट्रीय दल बसपा को तो काई भी सीट नहीं मिल पायी।

सन्दर्भ :

(1) केन्द्रीय निर्वाचन आयोग, भारत सरकार की वेबसाइट।

(2) *दैनिक भास्कर – 17 मई, 2014.*

(3) *जनसत्ता – 17 मई, 2014.*

(4) *राजस्थान पत्रिका – 17 मई, 2014.*

(5) *www.eci.nic.in*

❁❁